अमृत कलश

मुसीबतों में निखरती है प्रतिभा

सुविधा भरा जीवन आलसी बनाता है और प्रतिभा को प्रसुप्त स्थिति में धकेल देता है । संघर्षमय, कठिनाई भरे जीवन में अनेक असुविधायें कितनी ही क्यों न हों, इतना लाभ स्पष्ट है कि उससे मनुष्य की प्रतिभा निखरती है । अमीरी के वातावरण में से कदाचित् ही कभी कोई प्रतिभाएं उभरती हैं । संसार भर के महामानवों के इतिहास में यह तथ्य स्पष्ट है कि वे या तो कठिनाईयों की परिस्थितियों में जन्में थे अथवा उन्होंने जानबुझकर कठिनाईयों से भरा जीवन क्रम अपनाया था । पत्थर पर रगड़ने से ही चाकु की धार तेज होती है । मानवीय प्रतिभा के तीक्ष्ण होने में भी यही तथ्य काम करता है ।

अपने आपको परिष्कृत करके देवस्तर तक पहुँचाने का प्रयास ही वास्तविक साधना है ।

श्री श्री नारायण साँई

अमृत कलश

Amrit Klash

श्री साँई-बापू धाम

ग्राम-पेढ़माला, पॉ.ओ-रूपाल(सांबरकांठा) गुजरात-383030

श्री श्री माँ महँगीबा महिला कल्याण केन्द

गांभोई, (सांबरकांठा) गुजरात फोनः 02772-250111

संत श्री नारायण साँई कल्याण आश्रम ट्रस्ट

कल्लीपुरा-मेघनगर, (झाबुआ) म.प्र फोनः 07390-284102

Rs.: 5-00

अ नु क्र म

1. एक कदम संकिर्णता से
व्यापकता की ओर---------1
2. आंतरिक साधना-----------14
3. क्रियाओं कि सिद्धि होती है
सत्व के द्वारा---------------22
4. मानव जीवन का लक्ष्य----36

*** अमृत बिंदु ***

मन से सबको परमात्मा का स्वरूप समझकर सबको सम्मान दना,सबकी सेवा की ईच्छा रखना,वाणी से मधुर एवं आदर युक्त वचन कहना तथा तन से विनय युक्त व्यवहार करना ही सुखी, स्वस्थ, सम्मानित और सफल जीवन का राज मार्ग है ।

एक कदम संकिर्णता से व्यापकता की ओर

"ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मविद् भवति । तस्मात् ब्रह्मणि ते स्थितः"

जो ब्रह्मवेत्ता है वो ब्रह्म का स्वरूप है। वो ब्रह्म में ही स्थित होते हैं। बहुत ऊँची बात है। इसको सुनने का भी बड़ा माहात्म्य है। स्वामी रामतीर्थ कहते थे कि 'अगर लाख लोगों में केवल एक व्यक्ति भी ब्रह्मवेत्ता हो जाये, ब्रह्म साक्षात्कार कर ले, तो पूरी दुनिया स्वर्ग में बदल जाये।'

ये शरीर मैं हूँ एवं शरीर के संबंध,विषय और वस्तुऐं मेरी है; इसी संकीर्णता में व्यक्ति फँस जाता है। दायरे पर दायरे, कुंडाले पर कुंडाले; और सीमित मति,और सीमित बुद्धि हो जाती है । उसी में मानव ऐसा फँस जाता है कि जैसे हाथी दलदल में फँस जाता है और एक पैर निकालने के लिए ज्यों ही दूसरे पैर को जोर मारता है, त्यों और फँसता जाता है। अंत में उसी दलदल में मर जाता है। विश्व भर की 600 करोड़ जनसंख्या में से कोई भी एक व्यक्ति ऐसा नहीं मिलेगा जो कोई भी कार्य दुः ख प्राप्ति के लिए करता हो लेकिन फिर भी लोग दुः खी देखे जाते है। जब तक परमानंद की प्राप्ति नहीं हुई तब तक आधि- व्याधि और उपाधि का दुः ख दूर नहीं हो सकता।

लोहे से हीं सुई बनती है और लोहे से ही हथौड़ी बनती है; किन्तु पैरों में काँटा लगे तो सुई से ही निकलेगा, हथौड़े से नहीं निकलेगा। सुई कैसी है? सूक्ष्म है, पतली है तो उससे

काँटा निकलता है; ऐसे ही बुद्धि सूक्ष्म होने से ज्ञान होता है। ज्ञानरूपी सुई से ही दुः खरूपी काँटा निकलेगा। ऐसे लोग भी हैं जो पचास-पचास साल से,सत्तर-सत्तर साल से सीताराम सीताराम करते है। जप,तप,व्रत उपवास करते हैं फिर भी जीवन में कोई आनंद नहीं है,उल्लास नहीं है; क्योंकि संकीर्णता से छुट नहीं पाये है, अपने कल्पित दायरे से बाहर नहीं आ पाये है।

कभी न छूटे पिंड दुःखों से, जिसे ब्रह्म का ज्ञान नहीं।

भगवद् प्राप्ति साधन के बल पर नहीं होती। मैं इतना जप कर लूँ, मैं इतना तप कर लूँ, इतने उपवास कर लूँ, व्रत कर लूँ तभी भगवान मिलेंगे ऐसी बात नहीं है। युक्ति से मुक्ति होती है। गाड़ी को चलाना हो तो गाड़ी की आरती,पूजा करने से गाड़ी नहीं चल सकती। गाड़ी चलाने के लिए गियर, एक्सीलिटर और क्लच का ज्ञान होना चाहिए, गाड़ी चलाने की युक्ति होनी चाहिए तो गाड़ी आसानी से चलेगी। ऐसे ही ब्रह्म की प्राप्ति आत्म कृपा,गुरू कृपा और ईश्वर कृपा से ही होगी। उपनिषद का मंत्र है:

ना अयं आत्मा प्रवचनेन लभ्यः
न मेधया न बहुधा श्रुतेन।

अर्थात् ये आत्मा सब में व्याप्त है। जितनी चींटी में है उतनी ही हाथी में है, उतनी ही घोड़े, गधे और बिल्ली में भी है। ऐसा नहीं कि हाथी में आत्मा बड़ी है और चींटी में छोटी है। उस आत्मा को जानना जरूरी है, बिना जाने मुक्ति संभव नहीं है। आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों, इस साल नहीं तो

अगले साल, इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में, सौं जन्मों के वाद भी जानना पड़ेगा ही। जाने बिना जीव को परम विश्रांति नहीं मिलेगी। जहाँ हजार जन्मों के वाद पहुँचना है वहाँ अभी से क्यों न पहुँचे?

किसी के पास अधिक बुद्धि है, अधिक धन है या अधिक सत्ता है तो उसके कारण वो इस आत्मा को जान सकेगा ऐसा भी नहीं है। बहुत कथा-प्रवचन सुनने से ही साक्षात्कार होगा ऐसी बात भी नहीं है। शास्त्रों में ऐसी-ऐसी विभूतियों की बात भी आती है जो पढ़े लिखे नहीं थें, अधिक धन दौलत जिनके पास नहीं थी फिर भी युक्ति थी उस आत्मा में एकाकार होने की, अपने आप में विश्रांति पाने की, तो वे बड़े-बड़े राजा महाराजाओं से भी महान हो गए। जिन्होंने अपने आत्मा को जान लिया उनके बारे में शास्त्रों ने कहा है कि :

दातं तेन सर्व दानं, तपं तेन सर्व तपम्
स्नातं तेन सर्व तीर्थं, कृतं तेन सर्व कार्यं
येन मनः क्षणं ब्रह्म विचारे स्थिरो कृत्वा ।

उसने सर्व दान दे दिये, उसने सारे तप कर लिये, उसने सर्व तीर्थों में स्नान कर लिया, उसने सर्व कार्य कर लिये, जिसने एक क्षण भी ब्रह्मविचार में अपने मन को स्थिर कर लिया। लाख व्यक्तियों के बीच ऐसा एक भी महापुरूष आ जाये तो संसार में सुख-शांति की अनुभूति तुरंत हो सकती है। ऐसे महापुरूष बोले तब भी हमारा भला और चुप बैठे रहे तो भी हमारा भला ही हैं। उनकी प्रत्येक बोलचाल संसार के

मंगल के लिए ही होती है। ऐसे महापुरूष तीर्थों को तीर्थत्व प्रदान करनेवाले होते है। ऐसे ज्ञानी पुरूषों की महिमा का वर्णन करते हुए नारदजी ने कहा है:

तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि, सुकर्मीकुर्वन्ति कर्माणि ।
सच्छास्त्रीकुर्वन्ति शास्त्राणि ।।

'ऐसे ज्ञानी तीर्थों को तीर्थत्व प्रदान करते हैं, कर्मों पावित्र्य प्रदान करते है।शास्त्रों को शास्त्रत्व प्रदान करते है।'

(नारद भक्ति सूत्र, ६९)

कोई तीर्थ में पूजा करते हैं, परिक्रमा करते हैं, होम हवन इत्यादि भी करते है फिर भी ईश्वर प्राप्ति नहीं होती। अगर कोई समर्थ सद्‌गुरू मिल जाये; जिनके पास युक्ति हो जन्म मरण के बंधनो को काटने की, तो आपका हजारों जन्मों का काम एक ही जन्म में पूरा हो जायेगा।

ॐ---------ॐ------ॐ------ॐ------ॐ--------ॐ--------ॐ

भक्ति करें तो चेहरे पर तेज होना चाहिए, हृदय में प्रसन्नता होनी चाहिए, कल्पित मान्यताओं से मुक्ति मिलनी चाहिए, चित्त में समता होनी चाहिए; शरीर, मन और बुद्धि को थका देना भजन नहीं है, साधना नहीं है। अगर आप महापुरूषों की युक्ति को अपना ले तो कम मेहनत और कम समय मं आप त्वरित प्रगति कर सकते है। वरना हमारी भी ऐसी हालत होगी कि:

कोटि कोटि तीरथ करे, कोटि यज्ञ व्रत दान ।
जब लग साधु न सेवहि, तब लग काँचा काम ।।

तुलसीदासजी महाराज ने भी रामायण मे कहा है:

जन्म जन्म मुनि जतन कराई, अंत राम कछु आवत नाही ।

तन सुकाय पिंजर किये, धरे रैन दिन ध्यान ।
तुलसी मिटे न वासना बिना विचारे ज्ञान ।।

दिन रात भले ही आप ध्यान किया करो, बिना हिले डुले मूर्ति की तरह बैठे रहो, इतनी तपस्या करो कि शरीर सुख कर हड्डियों का ढाँचा बन जाये, धूप में खड़े रहकर तप करो फिर भी ब्रह्म साक्षात्कार हो जाये ये निश्चित नही है। संतों और शास्त्रों के बताये मार्ग पर चलने से ही हमारी मुक्ति सभव हैं।

-------नारायण------नारायण------नारायण------नारायण---------

मन और प्राण का गहरा संबंध है। एक ही सिक्के के दो पहलू है, जिसने अपने प्राण को वश में कर लिया उसका मन भी आसानी से वश में हो जाता है। प्राण को वश में करने के लिए प्राणायाम अत्यंत उपयोगी है। रोज नियमित रूप से प्राणायाम करने पर प्राण सूक्ष्म हो जाते हैं, मन एकाग्र होने लगता है, बुद्धि सूक्ष्म हो जाती है। शरीर की कसरत व्यायाम से और प्राणों की कसरत प्राणायाम से होती है। हम चाहते हैं कि आपका शरीर निरोग रहे, मन प्रसन्न रहे एवं बुद्धि में बुद्धिदाता का प्रकाश हो और आप मानव जीवन के परम लक्ष्य परमात्मा को प्राप्त कर लें। आपके पास अगर प्राण को वश में करने की कला है तो आपका मन भी आसानी से वश में हो जायेगा। प्रणव का जप करने से भी मन एकाग्र एवं परमात्माभिमुख होता है। दृढ भावना करो कि सफलता, बुद्धि, साहस, उद्यम, शक्ति आपके भीतर ही निहित है। उसे जागृत करने के लिए प्रणव का दीर्घ उच्चारण करो फिर देखो कि कितना आनंद आता है। हम लोग दुःखी क्यों हैं,हमारे मन में उल्लास क्यो नहीं है? क्योंकि संकीर्णता से छूट नहीं पाये

हैं। आप सुख-दुः ख, मान-अपमान से पार होकर परमात्म शांति, परमानंद का अनुभव करो ऐसी हमारी ईच्छा है। काल्पनिक भय और चिंता से एक दो नहीं अनगिनत लोग पीड़ित हैं। जिसने हमको जन्म दिया, जो पल-पल हमारी रक्षा करता है, उस ईश्वर पर हमें विश्वास नहीं रहा यह कितनी दुः खद बात हैं। पूरी दुनिया आप के विरुद्ध खड़ी हो जाये लेकिन यदि आप ईश्वर पर आश्रित है, ईश्वर में स्थित है तो आपका बाल भी बांका नहीं हो सकता है। इसका एक उदाहरण मेरे पास है :

उड़ीसा में भारी तूफान आया था। एक आदमी मजबूत वाल्टी जैसे खाली डिब्बों में पानी भरने जा रहा था। अकस्मात समुद्र की ओर से तीव्र गति से आने वाली चक्रवाती तूफानी हवाओं ने रौद्र रूप दर्शाया। उस समय हवा कच्चे मकानों की छतों को उड़ा रही थी, तिनको को तो क्या आदमी को भी उड़ा ले जा रही थी। चारों ओर त्राहिमाम् मचा हुआ था। लोग बेघर हो गये थे। इस महाभयंकर विनाशकारी और प्रलयंकारी तूफान का प्रभाव जन मानस के साथ-साथ पशु-पक्षियों जीव-जन्तुओं और उस इन्सान पर भी पड़ा। चंद मिनटो में ही चक्रवाती तूफान शांत हो गया। वहाँ की जमीन नदी का स्वरूप ले चुकी थी, अर्थात् सब जगह पानी-पानी हो गया था। इसी दौरान तूफान के कारण वह आदमी उन डिब्बों के सहारे उड़ा। तूफान शांत होन पर वो पानी में गिरा। उसे तैरना आता था तो वह तैरकर पानी से बाहर आ गया। बाहर आकर अपने को सुरक्षित जानकर ईश्वर की असीम करुणा-कृपा को देखकर भाव-विभोर हो गया। तात्पर्य यह है कि जिसे वो

ईश्वर बचाना चाहता है, उसे कौन मार सकता है?

जाको राखे सांइयाँ, मार सके ना कोय ।
बाल न बांका कर सके, चाहे जग वैरी होय ॥

हम केवल उस परमात्मा पर श्रद्धा, विश्वास रखें, उनके आश्रित होकर रहे बाकी का वे अपने आप संभाल लेंगे। किन्तु हम अपनी मान्यताओं और कल्पनाओं में उलझ जाते हैं। ऐसा नहीं ऐसा ही होना चाहिए और इस तरह ही होना चाहिए। हम अपनी बुद्धि के अनुसार भगवान को चलाना चाहते हैं तभी दुः खी होते हैं। भगवान को कह दो कि- **तेरी मर्जी पूरण हो ।** जैसा आपको हमारे लिए अच्छा लगे वही हो। हम अपने आग्रह और पकड़ को छोड़ दे तो उन्नति तत्काल हो सकती है। शास्त्रो में भी कहा है कि बुद्धि का फल है अनाग्रह-

बुद्धि फल अनाग्रहः ।

अपनी स्थिति को पैसे या वस्तुओं से नही आत्यात्मिक ढंग से देखो। सुख-दुः ख में समता बढ़ी कि नही? ईश्वर के प्रति श्रद्धा और विश्वास बढ़ा कि घटा? शरीर में जो आसक्ति थी कम हुई या नहीं? सांसारिक वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति ममता बढ़ी कि घटी? अगर आसक्ति और ममता बढ़ती है, तो जीव का पतन होता है। वैसे तो ज्ञानी में भी अहंता ममता दिखती है। ज्ञानी की कुटिया जलती है तो वे भी भागेंगे, वे भी आग बुझायेंगे किन्तु ज्ञानी जानकर आग बुझाते हैं और अज्ञानी आसक्ति से ग्रसित होकर दौड़ता है।

मरुभूमि में अज्ञानवश पानी देखकर दस आदमी जा रहे थे। एक ज्ञानी भी वहाँ खड़े उनकी बातें सुन रहे थे। उन लोगों ने कहा कि 'अरे, सामने पानी है चलो नहाने चलें।' तब ज्ञानी

ने कहा कि: 'वहाँ पर पानी नही है।' किन्तु वे लोग माने नहीं 'दिख रहा है फिर कैसे नहीं है?' ये बात उनकी समझ में नही आई। वे लोग चले पानी पीने के लिए और साथ में वह ज्ञानी भी करुणावश हो लिये। किन्तु वे जानकर, समझ से जा रहे थे तो वहाँ जाने पर पानी न मिलने से वे दुः खी नहीं हुए। गीता में भी भगवान ने यही बात को कहा है कि:

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

असत् वस्तु की तो सत्ता नहीं है और सत् का अभाव नहीं है। इस प्रकार तत्वज्ञानी पुरूषों द्वारा इन दोनों का ही तत्व देखा गया है।

(भगवद् गीता:2.16)

वैसे ही खाने को तो ज्ञानी भी खायेगें, पीयेंगें, हँसेंगे, रोयेंगे, सब कुछ करेंगे, किन्तु वे जानकर कर रहे हैं, इसलिए सब कुछ करते हुए भी सुख-दुः ख से पार होते हैं और अज्ञानी कुछ न करने पर भी बंधन युक्त होता है। आप भी सुख-दुः ख से पार होने के लिए अपनी अहंता और ममता को मिटाने का प्रयत्न करों। इसके लिए उपाय है कि जिनकी अहंता, ममता का नाश हो गया है ऐसे संतो के दर्शन व सत्संग प्रयत्न पूर्वक करे। उनके वचनों का चिंतन, मनन करें। अहंता और ममता मिटते ही, परमानंद के द्वार खुल जायेंगे और आप बड़े भारी दुः ख से भी चलायमान नहीं होंगे।

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

परमात्मा की प्राप्तिरूप जिस लाभ को प्राप्त होकर उससे अधिक

दूसरा कुछ भी लाभ नहीं मानता और परमात्म प्राप्तिरूप उस अवस्था में स्थित योगी बड़े भारी दुःख से भी चलायमान नहीं होता ।

(भगवद् गीता-6.22)

बारह सूर्य तपने लग जायें, धरती फट जायें, प्रलयकाल की आंधी चले फिर भी ज्ञानवान के चित्त में क्षोभ नहीं होता है, विक्षेप नहीं होता है, उसको आश्चर्य नहीं होता क्योंकि वे जानते हैं-ये सब सपना है। उनकी तुलना भला किसके साथ हो सकती है?

निःस्पृहं मानसं यस्य नैराश्येऽपि महात्मनः ।
तस्यात्मज्ञानतृप्तस्य तुलना केन जायते ॥

जिस महात्मा पुरुष की चित्त-वृतियाँ मोक्ष या निर्विकल्प समाधि के लिए भी विचलित नहीं होती ऐसे आत्मज्ञान से तृप्त महात्मा की तुलना भला किसके साथ हो सकती है?

(अष्टावक्र गीताः 3. 12)

वे पूरे ब्रह्मांड के साथ अपनी अभेदता का अनुभव करते हैं। उनका उपदेश भी यही है कि तुम भी परमात्म स्वरूप ही हो। शरीर के बाद भी जो रहता है वही आपका वास्तविक स्वरूप है। उसी को जानकर मुक्त हो जाओ। शरीर, मन एवं इन्द्रियाँ सब परिवर्तनशील हैं और तुम हो अपरिवर्तनशील। अपने वास्तविक मैं को जानो।

जरा-जरा सी बात मं जिनके चित्त में ठेस लग जाती है और जो दुः खी हो जाते हैं, उनको समझना चाहिए कि अभी चित्त जितना परिपक्व होना चाहिए उतना नहीं हुआ है। जरा-जरा सी बात में भयभीत हो जाना, किंकर्तव्यमूढ हो जाना,

प्रतिकूलताओं से विचलित हो जाना चित्त की अपरिपक्वता का परिचय देता है। अपने चित्त को परिपक्व बनाने की कोशिश करनी चाहिए। लाख रूपये चले जायें तो कोई हर्ज नहीं किन्तु चित्त की समता नहीं जानी चाहिए, चित्त खराब नहीं होना चाहिए। जितनी बाहर की चीज, वस्तुऐं बिगड़नें की चिंता है उतनी अगर हृदय बिगड़ने की चिंता होती तो महान बनना उतना ही स्वाभाविक है जितना पतित होना।

परिर्वतनशील का प्रभाव अपरिवर्तनशील पर कैसे पड़ सकता है? अनित्य का प्रभाव नित्य पर कैसे पड़ सकता है? आप नित्य है, अपरिवर्तनशील है। यह जगत अनित्य और परिवर्तनशील है। इन बातों को जानने के लिए प्रतिदिन आत्म निरीक्षण का अभ्यास करो, आत्मविश्लेषण करो, आत्म अनुसंधान करो। इधर क्या हुआ, उधर क्या हुआ इसकी खटपट से बच कर अपने भीतर क्या हो रहा है उसे भी तो जानों!!

आपका आचरण, आपका वाणी-वर्तन ऐसा बनाओ कि दूसरें लोगों के मन में भी भक्ति जागृत हो जाये। ज्ञान वो ही प्राप्त कर सकता है जिसमें भक्ति होगी, श्रद्धा होगी, संतों और शास्त्रों के प्रति अहोभाव होगा, तत्परता तथा ईश्वर के प्रति विश्वास होगा। उस ज्ञान को प्राप्त करके, धीर पुरूष शोक नहीं करते।

मत्वा धीरो न शोचति

वह महापुरूष शोक के महासागर को तर जाता है। सारा संसार उसके लिए गोपद की नाई हो जाता है। जिन वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति के लिए दुनिया अपना सिर पटकती है, भगवान के प्यारे उस जगह पर अपने कदम रखकर आगे बढ़ते

हैं। जिसके लिए दुनिया ऐडी से चोटी तक का जोर मार रही है, उन बातों की आत्मवेत्ता महापुरुषों को कोई कीमत ही नहीं। जैसे ट्राफिक के नियम जो सड़क पर चलते है उसी के लिए है पर जो हवाई मार्ग से मुसाफरी करता है उसके लिए सड़क के नियम लागू नहीं होते हैं। उनके लिए तो खुला आसमान है। वैसे ही ब्रह्मवेत्ता उस ऊँचाई पर होते हैं जहाँ वे सब कुछ करते हुए भी निर्लिप्त रहते हैं।

ब्रह्मज्ञानी सदा निर्लेपा ।
जैसे जल में कमल अलेपा ।।

संत कबीरजी ने भी ऐसे ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है:

रहत माया में फिरत उदासी ।
कहत कबीर मैं उसकी दासी ।।

दुनियावालों का हाल उस मकड़ी की तरह है जो अपने बनाये जाले में आप ही फँस जाते हैं। खुद ही जाला बनाते हैं और फिर उसी में फँस जाते हैं; फिर परेशान होते हैं कि निकल नहीं पाते। संसार हमें छोड़ता नहीं। वास्तविकता यह होती है कि हम ही संसार को नहीं छोड़ पाते हैं।

बारिश का मौसम था। नदी में बाढ़ आई हुई थी। एक व्यक्ति नदी पार करना चाहता था। उसने देखा कि नदी में एक कम्बल बहा जा रहा है। सोचा कि कम्बल को पकड़ के नदी पार कर लूंगा। वह नदी में कुदने जा रहा था उसे देख कर एक महात्मा जो वहाँ पर खड़े थे उन्होंने कहा कि 'भई! मत जा। बाढ़ आयी है, बहाव तेज है।' किन्तु वह माना नहीं

और कुद गया नदी में। कम्बल पकड़ लिया; फिर पता चला कि वह कम्बल नहीं रींछ था। रींछ ने उसे पकड़ लिया। महात्मा ने कहा 'भाई! छोड़ दे उसको, बाहर आ जा।' तब उस आदमी ने कहा किः 'महाराज! मैं तो छोड़ना चाहता हूँ लेकिन रींछ ही मुझे नहीं छोड़ता है।' ऐसा ही हाल है लोगों का पहले संसार को पकड़ने जाते है फिर संसार ही उनको ऐसा पकड़ लेता है कि छूटना चाहते हैं फिर भी नहीं छूट पाते हैं। जब तक दृढ़ अभ्यास नहीं होता तब तक ईश्वर की असीम, अवर्णनीय अनुकंपा का एहसास नहीं होता।

माया रची तू आप ही है, आप ही तू फँस गया ।
कैसा महा आश्चर्य है, तू भूल अपने को गया ।।

बातें तो बड़ी-बड़ी करते हैं, ज्ञान और वैराग्य की किन्तु आचरण में कितना आया यह देखें तो पता चले कि स्वयं की स्थिति कैसी है? गहराई से देखों की भीतर कितनी अहंता है, कितनी ममता है?

एक व्यक्ति भैंस के गले में रस्सी बांध कर उसे ले जा रहा था। महात्मा वहाँ से पसार हो रहे थे। उन्होंने उस व्यक्ति से पूछा कि अरे भैया! क्या कर रहे हो? आदमी ने कहा भैंस को बांध कर ले जा रहा हूँ। महात्मा मुस्कराकर बोलें तू भैंस को बांध रहा है कि भैंस ने तुझे बांधा है?आदमी हैरान हो गया और बोला कि महाराज! ये कैसी बात कर रहे हो आप? भैंस मुझे कैसे बांधेगी मैं ही भैंस को बांध रहा हूँ। महात्मा बोले नहीं, तू भैंस को नहीं बांध रहा है, भैंस तुझे बांध रही है। वो आदमी महात्मा की बात को सुनकर आश्चर्यचकित हो गया। तब महात्माजी ने नम्रता से कहा एक बार तू इस भैंस को छोड़

दे। उसने भैंस को छोड़ दिया तो भैंस विपरीत दिशा में जाने लगी और वह आदमी उसके पीछे-पीछे जाने लगा तब महात्मा ने कहा किः 'वो तुझे बांध रही है कि तू उसे बांध रहा है।

दिखता तो है कि वस्तुऐं हमारे लिए है किन्तु हम उनमें इतने आसक्त हो जाते हैं कि उनका उपयोग नहीं कर पाते हैं और उसे संभाल-संभाल कर ही मर जाते हैं। लगता तो है कि धन हमारे लिए है पर हम उसके चौकीदार बनकर ही रह जाते हैं उसका सद्‌उपयोग नहीं कर पाते । यह समझ मिलती है सत्संग से, संतो के सानिध्य से। तुम धन, चीज-वस्तु इत्यादि के लिए नहीं बने हो अपितु सारी चीज-वस्तुएँ, धन-संपत्ति आपके लिए बनी है। आप उसके स्वामी बनो, उसके गुलाम मत बनों। उसके बिना चले ही नहीं, उसी के चिंतन में समय बीत जाये और परमात्मा के चिंतन के लिए समय ही न मिल पाए तो यह मानव जीवन का दुरूपयोग ही तो हुआ।

आत्मा अमल साक्षी अचल, विभु पूर्ण शाश्वत मुक्त है ।
चेतन असंगी निस्पृही,शुचि शान्त अच्युत तृप्त है ॥
निज रूप के अज्ञान से, जन्मा करे फिर जाये मर ।
भोला! स्वयं को जानकर, हो जा अजर, हो जा अमर ॥

'हे अमर आत्मन्! नश्वर शरीर, नश्वर वस्तुऐं, नश्वर संबंध का सदुपयोग करते हुए शाश्वत को पाने की चाह को तीव्र बना लो। बहुत समय बीत चुका अब समय को संभालते हुए सत्य को पाने की प्यास बढ़ाओ। शाश्वत परमात्मा को उपलब्ध करो।'

करो हिम्मत। अवश्य सफल बनोगे। इसी जीवन में अजर अमर आत्मा का अनुभव करने में सफल हो जाओ। समय बड़ा मूल्यवान है।

आंतरिक साधना

निर्मानमोहा जितसङ्दोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्त कामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥

जिनका मान और मोह का नाश हो गया है, जिन्होंने आसक्तिरूप दोष को जीत लिया है, जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है और जिनकी कामनाएँ पूर्णरूप से नाश हो गई हैं वे सुख-दुः ख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानीजन उस अविनाशी परम पद को प्राप्त होते हैं, जिसे प्राप्त करके जीव संसार में नहीं आते, उस स्वयं प्रकाश परम पद को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है, न चन्द्रमा और न अग्नि ही। वही मेरा परम धाम है।

(*भगवद् गीताः* 15. 5,6)

जिस तत्व को कर प्राप्त परदा,माह का फट जाये है ।
जल जाय हैं सब कर्म, जिज्जड़-ग्रन्थि जड़ कट जाये है ॥
सो ब्रह्म है तू है वही, पुतली नहीं तू मांस की ।
भोला! स्वयं हो तृप्ति सुतली, काट दे भव पाश की ॥

(वेदांत छंदावली)

सोचो कि 'मैं कौन हूँ?' इस प्रश्न को बार बार सोचो। सोच सोचकर फिर से सोचो। अपने आप से पूछ पूछ कर फिर से पूछो कि मैं कौन हूँ? और क्या जवाब आता है देखो। क्या तुम भाई हो? क्या तम माई हो? क्या तुम शरीरधारी हो? क्या तुम उम्रधारी हो? क्या तुम पुण्यात्मा हो?

क्या तुम पापी हो? तुम कौन-सी जाति, कौन-से संप्रदाय, कौन-से मत के हो यह बाद की बात हैं। पहले तुम हो कौन यह तो जानो! क्या तुम मन हो? क्या तुम बुद्धि हो? कौन हो? जो शरीर कार्य करता है उसे करने दो, जो मन सोचता है उसे सोचने दो, जो बुद्धि निर्णय करती है उसे करने दो। वास्तव में तुम जो हो उसने कभी कुछ नहीं किया। जो रोगी-निरोगी, दुर्बल-बलवान, मोटा-पतला है वह शरीर है। क्या तुम शरीर हो? सुविचार और कुविचार मन में आते है; क्या तुम मन हो? जो निर्णय करती है वह बुद्धि है। क्या तुम बुद्धि हो? अच्छा-बुरा श्रवण करते है कान; क्या तुम कान हो?

न त्वं देहो न ते देहो भोक्ता कर्ता न वा भवान् ।
चिद्रूपोऽसि सदा साक्षी निरपेक्षः सुखं चर ॥

न तुम देह हो और न देह तुम्हारा है,न तुम कर्ता हो और न भोक्ता। तुम सदा एकरस,चैतन्य साक्षी हो, इसलिए निरपेक्ष होकर सूखपूर्वक विचरण करो।

(अष्टावक्र गीता-15.4)

दूसरों को तो बहुत देख लिया अब अपने आप को देखो। दूसर को तो बहुत खोज लिया अब अपने आप को खोजो। जहाँ जाना चाहिए वहाँ जाओ अन्यत्र कहाँ और कब तक जाते रहोगे। जहाँ पहुँचना चाहिए उस अंतरात्मा मे पहुँचों अन्यत्र कहाँ-कहाँ भटकते रहोगे।

भटक मूँआ भेदू बिना पावे कौन उपाय ।
खोजत-खोजत जुग गये, पाव कोस घर आय ॥

एक वृति उठे और दुसरी वृति उठने को है, उन दोनों के बीच की अवस्था; एक विचार आया और दूसरा

विचार आने को है, उन दोनों के बीच में क्या है और कौन है? इसका निरीक्षण करो। यह बारीकी से देखो। साँस भीतर गया, भीतर से बाहर आया, इन दोनों के बीच की स्थिति कैसी है? दोनों के बीच में क्या है? इसका निरीक्षण करो उनके बीच में जो है वही सत्य स्वरूप है, वही चैतन्यरूप है, वहीं आनन्दरूप है और वही तुम हो।

जब तक मानव अपने आपको कर्ता मानता है, भोक्ता मानता है तब तक वो कर्तृत्व और भोक्तृत्व के अभिमान से बच नहीं सकता है। जब उसको दृढ निश्चय होता है कि मैं अकर्ता और अभोक्ता हूँ, उसी क्षण उसकी सारी चित्त वृतियाँ क्षीण हो जाती है और वो निर्दोष ब्रह्म में स्थित हो जाता है।

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥

'जिनका मन संपूर्ण समभाव में स्थित है, उनके द्वारा इस जीवित अवस्था में ही सम्पूर्ण संसार जीत लिया है, क्योंकि सच्चिदानंदघन परमात्मा निर्दोष और सम है, इससे वे सच्चिदानंदघन परमात्मा में ही स्थित हैं।

(भगवद् गीताः 5.19)

अकर्तृत्वमभोक्तृत्वं स्वात्मनो मन्यते यदा ।
तदा क्षीणा भवन्त्येव समस्तश्चितवृतयः ॥

जब जिज्ञासु पुरूष स्वयं अकर्ता और अभोक्ता निश्चय कर लेता है; तब चित्त की सारी वृतियाँ क्षीण हो जाती है।

(अष्टावक्र गीताः 18. 51)

ये सारी वृतियाँ है। वृतियाँ बदलती रहती हैं। उसे

देखनेवाला मैं अबदल आत्मा हूँ। उसी के उपलक्ष्य में जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा है किः

आत्मा यदि दुःखी भवेत्
क्व साक्षीनो दुःखी भवेत् ।

यदि आत्मा दुः खी होती तो मैं दुः खी होता और यदि आत्मा सुखी होती तो मैं सुखी होता किन्तु आत्मा न तो दुः खी होती है और न ही सुखी होती है। यह सोचो कि दुः खी होने को जो देख रहा है वह कौन है? सुख को जो देख रहा है वह कौन है? दुः ख की घड़ियाँ आयी और गुजर गई, सुख की घड़ियाँ आयी और गुजर गई, लेकिन उसे देखने वाला मौजूद है। अनुकूलता आयी और गयी लेकिन उसे देखने वाला मौजूद है। वृतियाँ बदल गई, मन बदल गया, अवस्थाएँ बदल गई पर उसे देखने वाला जो आत्मा है; वह वही का वही है। आपका जन्म हुआ उससे पहले भी वह था, आपका शरीर नहीं रहेगा तब भी वह आत्मा रहेगा उस आत्मा से जिसने अपने दिल की तार जोड़ ली वो जीते जी मुक्त हो गया। त्रिलोकी में ऐसा कोई नहीं जो उसे बंधन में डाले। वो सब पाप-ताप से मुक्त हो गया जिसने अपने आत्मा को जान लिया।

जीव और जगत का अनुसंधान करने के लिए यह जीवन हमको मिला है, ईश्वर प्राप्ति के लिए यह मानव तन मिला है इसका सद्उपयोग हमें करना चाहिए।
उपनिषद्कार कहते है किः

उतिष्ठ जागृत प्राप्य वरान् निबोधयेत् ।

(कठोपनिषद)

उठो, जागो और तब तक चलते रहो, जब तक कि अपने लक्ष्य तक पहुँचो नहीं।

लोग समझते हैं कि इसने मुझे दुःख दिया, उसने मुझे सुख दिया। किन्तु हकीकत तो यह है कि न तो कोई आपको सुख दे सकता है और न दुःख दे सकता है। श्रीमद् भगवद् गीता में भी भगवान ने यही बात को कहा है किः

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः ।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥

'वह सर्वव्यापी परमेश्वर न किसी के पापकर्म को और न किसी के शुभकर्म को ही ग्रहण करता है, किन्तु अज्ञान के द्वारा ज्ञान ढका हुआ है, उसी से सब अज्ञानीजन मोहित हो रहे है।

(भगवद् गीताः 5.15)

को काहू को नहीं सुख-दुःख करी दाता ।
निज कृत करम भोगतहिं भ्राता ॥

किसी की वृति में है कि मुझे गाड़ी मिल जाये तो मैं सुखी हो जाऊँ, और किसी के पास गाड़ी है और वो बिक नहीं रही तो उसे बेचकर सुखी होना चाहता है; सुख गाड़ी होने में या जाने में सुख नहीं है। सुख वृति में है। कोई धन के लिए दुःखी है तो कोई ज्यादा धन है और कहाँ सेट करना इस उलझन में उलझा हुआ है। कोई पत्नी से दुःखी है तो कोई पत्नी के लिए दुःखी है। सारा संसार इच्छाओं और कामनाओं को लेकर दुःखी है।

सुखस्य दुःखस्य नकोपि दाता,परोदधातिति कुबुद्धिरेषा ।
अहंकारोमिति वृथाभिमाना,स्वकर्मसूत्रे ग्रथितो ही लोका ।।

न कोई किसी को सुख देता है और न कोई दुः ख देता है। इसने सुख दिया, या दुः ख दिया ये केवल हमारी बुद्धि में वृथा अभिमान से ही आता है और उसमें ही समस्त लोग बंधे हुए है। इससे मुक्त होने के लिए आत्म विचार अत्यंत उपयोगी है।

जिसके पास विचार रूपी मित्र है वह समस्त दुः खों और परेशानियों से हँसते-हँसते पार हो सकता है। विचाररूपी मित्र व्यक्ति की इस लोक में भी रक्षा करता है और परलोक में भी उसकी रक्षा करता है। इसलिए विचाररूपी मित्र को आप सदैव अपने साथ रखों। जरा सोचो आप जिसमें आसक्त हो रहे हो वह चीज, वस्तु, व्यक्ति आपके कितने काम में आये? तटस्थता से सोचो कि आप जिसको मेरा-मेरा कह रहे हो, वे क्या सचमुच में आपके है या स्वार्थ के कारण ही अपने दिखते हैं? संसार के सारे संबंध है वो स्वार्थ के कारण ही है। जब तक आपसे उनके सुख की पूर्ति होती रहे तभी तक वे आपके हैं और जिस क्षण आपसे उनके सुख की पूर्ति नहीं होती उसी क्षण वो आपके नहीं रहते, पराये हो जाते हैं। तुम्हारा तो अपना शरीर भी नहीं है। वो भी आपके कहने के अनुसार नहीं चलता। आप न चाहो फिर भी वो बीमार होता है, मरता है। जब आपका शरीर भी आपका नहीं है तो संसार की वस्तुएँ या व्यक्ति कब तक आपके हो सकते हैं? इस बात को आप जितना पक्का कर लोगे उतनी ही आंतरिक शांति बनी रहेगी। जिसको अपनी आत्मा में ही प्रीति है वो खुद तो अपने आप में तृप्त रहता है और उस देखकर देवता भी अपना भाग्य

बनाते हैं तो औरों की तो बात ही क्या? उसके लिए कोई काम बाकी नहीं रहा। उनकी उपस्थिति मात्र से लोगो को शांति मिलती है। उनके दर्शन और वाणी से लोग शांत रस, आनंद रस और माधुर्य रस पाते हैं। उनकी मंगलमय उपस्थिति भी वातावरण को सुहावना बनाती है।

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥

जो पुरुष आत्मा में ही रमण करने वाला और आत्मा में ही तृप्त तथा आत्मा में ही संतृप्त हो, उसके लिए कोई कर्तव्य नहीं है। (भगवद् गीताः 3. 17)

पराधीनता से मुक्त होना जरूरी है। वेदान्त कभी नहीं चाहता कि आप गुलाम बने रहो, दीन-हीन बने रहो। वेदान्त तो आपको यथार्थ नजर देता है कि आप शरीर नहीं आत्मा हो। जन्मता, मरता यह शरीर है, यौवन, वृद्धावस्था भी इस शरीर की होती है। हकीकत में बंधन का कारण वासना है, आवश्यकता अलग है और वासना अलग है। आवश्यकता की पूर्ति के लिए विशेष मेहनत नहीं करनी पड़ती वो सहज में ही पूरी हो जाती है, वासना पूरी करने के लिए मेहनत करनी पड़ती है फिर भी सब वासना तो किसी की भी नहीं पूरी होती है। सारी इच्छाएँ और वासनाएँ आज तक किसी की पूरी न हुई है, न होगी, न हो सकती है।

अमेरिका में एक माई है, साल के तीन सौं पैसठ दिन के लिए उसके पास तीन सौं नब्बें ड्रैस थी। रोज नई पहनने के लिए। ये वासना है, आवश्यकता नहीं। वासना को मिटाने का सुंदर उपाय है निः स्वार्थ सेवा, परोपकार, कर्म फल का त्याग

करके कर्म करो और फिर देखो कि भीतर से ही अपने आप खुशी, आनंद प्रकट होता है कि नही? जो ध्यान करते हैं उनमें पहले की अपेक्षा कार्य करने की अधिक शक्ति आ जाती है। जो लोग आलस्य या प्रमाद के वश होकर ध्यान का बहाना करते हैं वो कभी ध्यान में सफल नहीं हो सकते। जिन्होंने आपने अंतः करण को शुद्ध नहीं किया ऐसे अज्ञानीजन तो यत्न करने पर भी उस आत्मा को नहीं पा सकते हैं।

योग से साधना से अंतः करण शुद्ध होगा। एक बार अंतः करण शुद्ध हो गया फिर तो शीघ्र ही काम हो जाता है। अंतः करण की शुद्धि से परमात्मा का प्रकाश होगा। जब हम नींद लेते हैं तो नींद मं हमको विश्राम मिलता है उससे शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक कार्य करने की शक्ति आपके भीतर आती है। नींद में तो तन को विश्राम मिलता है पर ध्यान में तो मन, बुद्धि को पोषण मिलता है। इसलिये प्रयत्नपूर्वक प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। गीता में भगवान ने ऐसे योगी की महिमा का वर्णन करते हुए कहा किः

यत्रोपरमते चित्तं निरूद्धं योग सेवया ।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥

इस ध्यान योग के अभ्यास से निरुद्ध चित्त जिस अवस्था में उपराम हो जाता है और जिस अवस्था में परमात्मा के ध्यान से शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धि द्वारा परमात्मा को साक्षात करता हुआ सच्चिदानंदघन परमात्मा में ही सन्तृप्त रहता है।

(भगवद गीताः 6.20)

क्रियाओं की सिद्धि होती है सत्व के द्वारा

क्रिया सिद्धि सत्वे वसति महतां नोपकरणे ।

उन लोगों के कार्यों की सिद्धि होती है जिनके भीतर महानता के कुछ सिद्धांत होते हैं, जिनके भीतर सत्व होता है। मुख्य बात है सत्व, वो सत्व ही मानव को महान बनाता है। भले ही कोई कितनी भी लौकिक पढाई कर ले, चाहे कितना भी धन एकत्रित कर ले किन्तु उसके भीतर सत्व नहीं है तो वो महान नहीं हो सकता। न माई होने से महान होता है, न भाई होन से, न ज्यादा धन होने से महान होता है, न ज्यादा उम्र होने से। व्यक्ति के भीतर जितना सत्व होता है उतना ही वो महान होता है और जितना ही सत्व कम होता है उतना ही वो अधम हो जाता है। कोई कहे कि मेरे पास बहुत धन है और मैं इससे सब कुछ खरीद सकता हूँ तो ये बात गल्त है। धन से संसार की सुख सुविधा प्राप्त की जा सकती है किन्तु अगर सत्व नहीं है तो मिला हुआ धन भी चला जायेगा, मिली हुई सुविधा भी चली जायेगी।

एक व्यक्ति घर में, सब सुख-सुविधा में रहकर भी परेशान है और एक रहने को घर नहीं, खाने को रोटी नहीं, कोई सुख सुविधा न होने पर भी सुखी रहता है, मौज में रहता है, फक्कड़ होकर घुमता है। इसके पीछे क्या रहस्य है? सत्व की न्यूनता या अधिकता ही इसका रहस्य है।

जिसके भीतर सत्व होता है उसको उपकरणों की जरूरत

नहीं रहती, वह जहाँ जाता है वहाँ उसके लिए उपकरण तैयार हो जाते हैं। एक पिता है जो अपने बेटे को लाखों करोड़ो रूपये देता है फिर भी उस बेटे के भीतर सत्व नहीं होता तो वह सब कुछ गंवाकर रोड़ पर आ जाता है, और दूसरा वो बेटा है जिसको उसके पिता के तरफ से कुछ भी नहीं मिला है, पर वो सत्व के प्रभाव से बाहर का सब कुछ बना लेता है।

ऐसा व्यक्ति घोर असुविधा में भी चला जाये तो वहाँ भी सुविधा खींची चली आयेगी। बाहर का धन चला जाये तो कोई हरकत नहीं है, चीज वस्तएँ भी चली जाये तो भी कोई हरकत नहीं है किन्तु आपका सत्व नहीं जाना चाहिए क्योंकि सत्व होगा तो धन तो अपने आप आ जायेगा, चीज वस्तुएँ अपने आप आ जायेगी।

स्वामी रामतीर्थ अमेंरिका गये थे। उनके पास पहन कपड़ो के सिवा कुछ भी नहीं था। जब स्टीमर में से सब लोग उतर रहे थे तब वे आराम से बैठे हुओ थे। आखरी आदमी उतर रहा था उसने रामतीर्थ से पूछा कि 'आपका कोई मित्र नहीं है?' तब रामतीर्थ ने उन पर अपनी स्नेहभरी निगाहें ड़ालते हुए कहा कि 'तुम ही तो मेरे मित्र हो।' उनकी नजर और वाणी का ऐसा जादुई प्रभाव पड़ा कि वह व्यक्ति स्वामी रामतीर्थ का प्रसंशक बन गया और उनको अपने घर ले गया। पूरा विश्व ऐसे उदार चरित्र महात्माओं का मित्र होता है, पूरा विश्व उसका परिवार होता है। उनको संकीर्णता से कोई मतलब नहीं होता है।

'अंग्रेज भारत छोड़ो' यह सूत्र गांधीजी ने जब दिया तो

लोगों ने उनकी मखौल उड़ाई और उनके विचारों और प्रयासों को असंभव बताया किन्तु उनमें सत्व था और लगे रहे तो सभी जानते ही हैं कि अंग्रेजों को आखिर भारत छोड़ना ही पड़ा।

विपरित परिस्थितियों में भी कभी अपने हौंसले को कमजोर मत करो। क्षुद्र जीव तुम्हारे विरूद्ध क्या बोलते है इसकी तनिक भी परवाह मत करो। इस बात को सदैव याद रखों कि ईश्वर का असीम बल आपके भीतर है।

जो विचार आपको कमजोर बनाये, दीन,हीन और दुर्बल बनायें उन विचारों को काँटो की तरह उखाड़कर फेंक दो, उनका विष की नाई त्याग कर दो और उन विचारों को आश्रय दो जो आपको बलवान बनाते है, आपमें शक्ति भरते है, आपको हिंमत देते है, आपके होंसले को मजबुत करते है; उन विचारो को प्रयत्नपूर्वक अपनाओ। सफल कौन होता है? सफलता का रहस्य क्या है?

उद्यमः साहसं धैर्य बुद्धिः शक्ति पराक्रमः ।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देव सहाय कृत ॥

उघम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम ये छे गुण जिसमें होते हैं उसको देव भी सहाय करते हैं।

यह घटना सन् 1910 की है- जर्मनी में एक ट्रेन में एक सोलह वर्षीय किशोर यात्रा कर रहा था। घर से भागकर वह कहीं दूर जाना चाहता था। पैसे के अभाव में वह टिकट न ले सका। टिकट निरीक्षक को देखते ही उसने सीट के नीचे छिपने की कोशिश की पर वह टिकट निरीक्षक की निगाहों से बच न सका। उसने किशोर से टिकट माँगा। टिकट तो उसके पास था

नहीं। पास में अखबार का टुकड़ा पड़ा था। किशोर ने उसे हाथ म उठाया। मन में संकल्प किया कि यह टिकट है और उसने टिकट निरीक्षक के हाथ में वह टुकड़ा थमा दिया। मन ही मन यह संकल्प दुहराता रहा- 'हे परमात्मा! उसे वह कागज का टुकड़ा टिकट दिखाई पड़ जाय।' उसके आश्चर्य का तब ठिकाना न रहा जब उसने देखा कि निरीक्षक ने उस कागज के टुकड़े को वापस लौटाते हुए यह कहा कि- 'क्या तुम पागल हो गये हो? तुम्हारे पास टिकट है तो सीट के नीचे छिपने की क्या आवश्यकता है?'

कहने का मतलब यह है कि एक कागज का टुकड़ा दृढ इच्छा शक्ति से टिकट दिख सकता है तो आप परमात्मा को पाने का संकल्प करें तो क्यों नहीं पा सकते हो?

दृढ संकल्प करों कि ईश्वर का अनंत बल,दिव्यता, सामर्थ्य मेरे भीतर छुपा है। मैं कभी भी दीन-हीन विचार करके अपने को दुर्बल नहीं करूंगा, कभी भी असहनशीलता या आत्महत्या के विचारों को अपने भीतर प्रवेश नही करने दूंगा। विपरित से विपरित परिस्थिति में भी अपने आत्मबल को कमजोर नहीं होने दूंगा। अपने आत्म संतुलन को कभी नहीं खोउंगा। मैं ईश्वर का सनातन सपूत अपनी आत्म शक्ति को जगाउंगा। ये मानव तन मिला है तो ईश्वर को पाकर ही रहूंगा। अपने शुद्ध, सात्विक, शुभ संकल्प को अवश्य पूरा करूंगा। अपने उस संकल्प में विकल्प को मत आने दो।

जब संकल्प में विकल्प आता है तो वह संकल्प कमजोर हो जाता है। इस लिए विकल्पों को हटाकर अपने संकल्प पर दृढ रहें, शुभ संकल्प को छोड़ें नहीं तो आज नहीं तो कल

आपका शुभ संकल्प आपको शुभ मार्ग पर लगा कर ही रहेगा और शुभातिशुभ परमात्मा का अनुभव होकर ही रहेगा; इसमें कोई संदेह नहीं है।

एक महत्वपूर्ण बात को याद रखें कि आपने जो शुभ संकल्प किया है वो, जो लक्ष्य निश्चित किया है उसे जिस किसी के सामने कहते न फिरे। गुप्त रखें क्योंकि आपके ऊँचे संकल्पो को समझने वाले इस दुनिया में बहुत कम होगें। जो भी आपको मिलेंगे वो स्वार्थवश होकर ही मिलेंगे। आपने ईश्वर प्राप्ति का जो संकल्प ठाना है वह बहुत ऊँचा है और आपकी अभी की स्थिति देखकर उस संकल्प का पूरा होना असंभव सा लगता है, ऐसी हालत में आप अपना ऊँचा संकल्प किसी को बताओगे तो हो सकता है वो आपकी मखौल करेगा और उस संकल्प के बीच विकल्प का वातावरण तैयार हो जायेगा। अतएव जितना आपका संकल्प ऊँचा हो उतनी ही गोपनीयता आवश्यक है। मौन रहकर अपने संकल्पों को दृढ करते रहना उचित है।

छोटी-छोटी बातों का संकल्प मत करो। व्यर्थ के संकल्पों से शक्ति क्षीण होती है। दस बार सोचो, अपने विवेक का आश्रय लो और फिर संकल्प करो। एक बार संकल्प कर लिया फिर उस पर डटे रहो। तो आप देखोगे कि जिस चीज वस्तुओं को प्राप्त करना पहले आपके लिए असंभव सा जान पड़ता था वहीं चीजें आपके पास खींची चली आती है।

उपनिषद में भी यही मंत्र आता है:

समगच्छध्वं समवदध्वं संवोमानासी जानताम् ।
देवाभागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥

अकेले मत चलो, मिलकर चलो, बोलो तो मिलकर बोलो हमारी बुद्धि एक हो। जरा सा कोई उपर उठा कि आसपास के लोग उसे नीचे गिराने में तत्पर हो जाते हैं। यह सामाजिक दोष है और समाज या देश को उन्नत होने में बहुत बड़ी बाधा है।

वास्तविकता तो यह है कि दूसरों को उन्नत करने से आप स्वयं अवनत रह ही नहीं सकते। एक दूसरे के सहयोग से उन्नति आसान हो जाती है। जब प्रतिकूलता आती है तभी हमारे धैर्य की परीक्षा होती है। तभी हमारी सुसुप्त शक्तियाँ जागृत हो जाती हैं।

वह पथ क्या? पथिक! कुशलता क्या?
जिस पथ पर बिखरे शूल न हो।
नाविक की धैर्य परीक्षा क्या?
जब धाराएँ प्रतिकूल न हो।

जब समुद्र में आंधी, तुफान आते हैं, धाराएँ प्रतिकूल होती है तभी नाविक की कुशलता की, उसके धैर्य की परीक्षा होती है। जो कुशल नाविक है वह प्रतिकूल धाराओं के बीच में भी नाव को सलामतीवूर्वक निकाल सकता है। उसी प्रकार जो कुशल साधक है वह प्रतिकूलताओं के बीच भी अपने लक्ष्य को नहीं भूलता, आध्यात्मिक रास्ते पर आनेवाले विघ्न बाधाओं को, संकटो को झेलकर उससे पार जाने का रास्ता खोज लेता है और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

अपने सोए हुए सामर्थ्य को जगाओ। कब तक दूसरों की गुलामी करते रहोगे। कब तक मरने वाले व्यक्तियों को रिझाते रहोंगे? आप अपनी तार उस ईश्वर के साथ जोड़ दो फिर

आपको किसी को रिझाने की जरूरत नहीं पड़ेगी सब अपने आप रिझे मिलेंगे। पूज्य बापू भी इन पंक्तियों को बड़ी दृढता के साथ नवयुवकों और विघार्थीयों को पक्का करवाते है:

वो सर सर नहीं, जो हर दर पर झुकता रहे ।
वो दर दर नहीं, जहाँ भक्तों का सर न झुके ॥

•

बाधाएँ कब बांध सकी है, आगे बढ़नेवालो को ।
विपदाएँ कब रोक सकी है, पथ पर चलनेवालो को ॥

•

जहाजो को जो डुबा दे, उसे तूफाँन कहते है ।
तूफाँनो से जो टक्कर ले, उसे ईन्सान कहते है ॥

•

लक्ष्य न ओझज होने पाये, कदम मिलाकर चल ।
सफलता तेरे चरण चूमेंगी, आज नहीं तो कल ॥

आवश्यकता आविष्कार की जननी है। जैसे बरसात से बचने की आवश्यकता से छाते और Rain coat (बरसाती) की खोज हुई। काँटों से बचने की आवश्यकता ने जूते-चप्पलों को खोज लिया। आँखों की रोशनी मंद पड़ी तो चश्में की खोज हो गई। सर्दी,गर्मी,आंधी, तूफान से बचने के लिए सूती,गर्म आदि कपड़े की खोज हो गई। दूरी को शीध्रता से तय करने की आवश्यता ने मोटर, स्कूटर आदि वाहनों एवं हवाई जहाज की खोज कर दी। नींद की आवश्यकता ने बिस्तर की खोज की। भूख को मिटाने के लिए पाकशास्त्र की

खोज हुई। ऐसे ही ज्ञान की भूख को मिटाने कें लिए गुरु की खोज हुई।

अगर आपकी आवश्यकता ईश्वर प्राप्ति की है तो वह आपकी आवश्यता आपको साक्षात्कारी महापुरुषों से मिलाकर ही रहेगी, आपकी प्यास बनी रही तो उनका कृपा प्रसाद और आपकी तत्परता आपको परम पद की प्राप्ति कराके ही रहेगी और फिर आपके द्वारा ऐसी खोज होगी जिससे आपका मन,बुद्धि बलवान और उन्नत हो जायेंगे फिर सुख-दुः ख की चोंट आपके चित्त को असर ही नहीं कर सकेगी। आप समता के धनी हो जाओगे और सारा संसार आपको स्वप्नवत् लगेगा।

एक फकीर थे। वो बोलते थे कि 'मैं भगवान हूँ। अहं ब्रह्मास्मि । मैं ईश्वर का भी ईश्वर हूँ। खुदा का भी खुदा हूँ। अनहल हक्क' ऐसा बोलते थे। उनका विरोध हो गया। उस समय को जो राजा था उसने कहा कि ये बोलना बंद कर दो नहीं तो मृत्यु दंड दिया जायेगा। किन्तु उन्होनें कहा कि 'मैं झूठ नहीं बोल सकता।' वास्तव में मैं ईश्वर हूँ'

वे महापुरुष अपने आत्मभाव से बोल रहे थे। शरीरभाव से ऊपर उठ चुके थे। लेकिन उनकी स्थिति को समझने वाले लोग नहीं थे। उनकी इस क्रांतिकारी वाणी से राज्य में उहापोह हो गया कि मन्सूर अहंकारी हो गया है। आखिर राजा ने उनको बंदी बनाने का आदेश दे दिया। उनको बंदी बनाया गया और कहा कि 'अगर अभी भी मान लें कि और कह दे कि 'मैं ईश्वर नहीं हूँ' तो उनको छोड़ दिया जायेगा।' पर वो अपनी बात पर अड़िग रहे आखिर राजा ने उनकी

खाल खींचने का आदेश दे दिया। उन्होंने कहा कि 'तुम क्या मेरी खाल खींचोगें मैं खुद ही अपनी खाल निकाल देता हूँ।' लोग देखते ही रह गये और वे अपने ही हाथों से नाखूनों के द्वारा अपनी खाल निकालने लगे। रक्त की धार बह चली।

कितनी असंगता रही होगी शरीर के प्रति उस महापुरूष की!! अपने ही हाथों से, अपने शरीर की खाल खींच रहे थे और चेहरे पर शिकन तक नहीं थी, किंचित् मात्र भी दुःख नहीं था, शोक नहीं हो रहा था, पराधीनता नहीं महसुस कर रहे थे। एक अनूठी प्रसन्नता उनके चेहरे पर झलक रही थी।

उनको देखने के लिए पूरे नगर के लोग मैदान में इकट्ठे हुऐ थे। लोग तमाशा देखकर तालियाँ बजा रहे थे। उन अज्ञानी लोगां को मालूम ही नहीं था कि ये महापुरूष कैसी ऊँची स्थिति के धनी है? परमात्म प्राप्ति क्या चीज है ये न तो उस राजा को मालूम था और नहीं प्रजाजनो कों। सारे लोग उनको शरीर देख रहे थे और वे महापुरूष अपने आत्मभाव में आकर बोल रहे थे।

जल्लाद ज्यों-ज्यों खाल खींचते गये त्यों ही उनके शरीर में से रक्त की धार बह चली। अचानक उस भीड़ में से एक लड़की दौड़कर आई और उस महापुरूष के चरणों में गिर पड़ी और उसने बहता हुआ उनका थोड़ासा रक्त पी लिया। उतने में राजा के सैनिक वहाँ पर आ गये और उस लड़की को बलपूर्वक वहाँ से हटा दिया। लड़की भीड़ में ओझल हो गई। कथा कहती है कि उस फकीर की तो खाल खींच ली गई और उसके नश्वर शरीर का अंत हो गया। लेकिन ईश्वर की ऐसी माया कि उस लड़की को रक्तपान करने के कारण गर्भ रह

गया और उसको जो पुत्र हुआ वह जगत में ईसा मसीह के नाम से विश्व विख्यात हुआ। वही ईश्वर के पुत्र के नाम से जाना गया। बाईबल में भी ईशु के पिता का उल्लेख नहीं आता। मरियम कुँवारी ही माता बनी थी।

ॐ--------ॐ--------ॐ--------ॐ-----------ॐ

जो व्यक्ति ईश्वरीय भाव में रहता है, उनकी उपस्थिति एक नये वातावरण का निर्माण करती है। वो जहाँ तक अपनी नजर डालते हैं वहाँ तक के जीवों को सुख-शांति के परमाणु मिलते हैं।

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्।।
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्।।

अर्थात् 'तत्व को जानने वाला सांख्ययोगी देखता हुआ, स्पर्श करता हुआ, सूँघता हुआ, भोजन करता हुआ, गमन करता हुआ, सोता हुआ, श्वास लेता हुआ, बोलता हुआ, त्यागता हुआ, ग्रहण करता हुआ तथा आँखों को खोलता और मूँदता हुआ भी, सब इन्द्रियाँ अपने-अपने अर्थों में बरत रही हैं- इस प्रकार समझकर निः सन्देह ऐसा मानें कि मैं कुछ भी नहीं करता हूँ। (भगवद् गीताः 5.-8,9)

भगवान शंकर ने भी गुरुगीता में ऐसे महापुषों का वर्णन कते हुए कहा है' किः

असनस्था शयाना वा गच्छन्तस्तिष्ठन्तोऽपि वा।
अश्वारूढाः गजारूढाः सुषुप्ता जाग्रतोऽपि वा।।
तेषां दर्शनसंस्पर्शात् पुनर्जन्म न विद्यते।

आसन पर बैठे हुए या लेटे हुए, खड़े रहते या चलते हुए हाथी या घोड़े पर सवार हुए जागृतावस्था में या सुषुप्तावस्था में जो पवित्र हुए ज्ञानवान का दर्शन करता है उसका पुर्नजन्म नहीं होता है।

जो अपने आप को भगवान के लिए बेच सकता है उसमें वो शक्ति आ जाती है कि वो पूरी दुनिया को खरीद सकता है और जो दुनिया के लिए अपने आप को बेच देता है वो दुनिया से भी ठुकराया जाता है, उसे मौत भी ठुकराती है और चौरासी लाख जन्मों में वो बेचारा जीव ठोकरें खाता रहता है।

ईश्वर के लिये जीवन न्यौछावर करने वाले, सत्य को पाये हुए किसी सिद्ध पुरुष के चरणों में अपने आप को न्यौछावर करने वाले किसी भाग्यशाली भक्त ने अपने हृदय के भावों को व्यक्त करते हुऐ कहा है कि- 'हे! मेरे गुरुदेव !

जब तक बिके न थे, तो कोई पुछता न था ।

तुमने खरीदकर मुझे, अनमोल कर दिया ।।

हो सकता है कि आपके जीवन में विघ्न, बाधा विरोध आये, विपरीत परिस्थिति आये लेकिन फिर भी आपके लक्ष्य को यदि न छोड़े तो देखते ही देखते सारे विरोध प्रसंशा में बदल जायेंगे, विपत्तियों के तूफान शांत हो जायेंगे, सारी प्रतिकूलता अनुकूलता में बदल जायेगी और आपका रास्ता साफ हो जायेगा।

यह परमात्म प्राप्ति का रास्ता अटपटा है, झटपट समझ में नहीं आता है और एक बार ठीक से समझ में आ जाये तो सारी खटपट चुटकी में खत्म हो जाती है।

एक राजा ने अपने मंत्री से चार सवाल पुछे थे।

1. है, है, है 2. है, है, नहीं
3. नहीं,नहीं, है 4. नहीं, नहीं, नहीं

राजा ने इस प्रश्न के उत्तर सात दिन के भीतर देने के लिए कहा। अगर न दे पाये तो मृत्यु दंड दिया जायेगा। मंत्री और सारे सभासद इन विचित्र प्रश्नों को सुनकर हैरान हो गये। मंत्री ने काफी चिचार किया किन्तु इसके उत्तर न मिल पाये। कितनी ही किताबें देख ली किन्तु इसका उत्तर खोजने में असफल रहे। वे प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए चिंतित रहने लगे। भोजन करते समय उनका चिंताग्रस्त मुख देखकर उनकी पुत्री ने पिता की चिंता का कारण जानने की कोशिश की। किन्तु मंत्री ने उसकी बात को टाल दिया। बहुत आग्रह करने पर उन्होंने राज दरबार में हुई सारी बात अपनी पुत्री को बता दी।

मंत्री की बेटी बड़ी चतुर थी। संत महात्मा की उस पर कृपा थी। वह हररोज सारस्वत्य मंत्र का जप करती थी जिससे उसकी बुद्धि सूक्ष्म हो गई थी। वो लड़की पिता के प्रश्नों को सुनकर थोड़ी शांत हो गई। उसने अपने पिता को कहा कि आप चिंता न करें मैं आपके प्रश्नों का उत्तर राजा को दूंगी। मंत्री को उसकी बात सुनकर आश्चर्य हुआ कि जिन प्रश्नों के उत्तर मुझे नहीं मिल रहे उसको यह लड़की कैसे देगी? किन्तु उनको अपनी बेटी की बुद्धि पर भरोंसा था इसलिए वह सहमत हो गये।

समय की अवधि पूरी होने पर पिता-पुत्री दोनों राज महल की ओर चल दिये। रास्ते में राजगुरु के पुत्र जा रहे थे। मंत्री की उस बुद्धिमान लड़की ने अपने पिता से रथ रुकवाकर उस गुरुपुत्र को आदर सहित रथ में बैठने को विनती की। उसकी विनती को

स्वीकार करके राजगुरु के पुत्र रथ में बैठ गये। थोड़ी दूर जाने पर नगर सेठ का पुत्र जुआ खेल रहा था। पुत्री के कहने पर मंत्री ने उसे भी अपने साथ ले लिया। और आगे जाने पर एक बूढ़ा आदमी त्रिषि आश्रम में झाडू लगा रहा था, उसे भी अपने साथ ले लिया। और आगे गये तो एक मच्छीमार मछली पकड़ रहा था। पुत्री ने इशारा किया और उसे भी साथ ले लिया। सबको लेकर रथ राज महल में पहुँचा।

मंत्री की पुत्री ने राजा के समक्ष उपस्थित होकर अपना परिचय दिया और कहा कि 'राजन्! ये चारों आपके प्रश्न के उत्तर है।' किसी की समझ में बात न आई इसलिए मंत्री की पुत्री ने अपने उत्तर का विवरण करते हुए कहा कि आपके पहले प्रश्न का उत्तर ये गुरुपुत्र है। इन्होंने पिछले जन्म म अच्छे कार्य किये थे, इसलिए इस जन्म में राज गुरु के यहाँ इनका जन्म हुआ है। अभी भी ये सत्कर्म में लगे हुए हैं इसलिए इनका आगे का जन्म भी उत्तम होगा अर्थात् है, है, है।

आपके दूसरें सवाल का जवाब है यह नगर सेठ का पुत्र। इसने पिछले जन्म में अच्छे कर्म किये थे इसलिए इस जन्म में नगर सेठ के यहाँ इसका जन्म हुआ, पर जुआ खेलकर और बुरी आदतों में यह अपना वर्तमान बरबाद कर रहा है इसलिए इसका अगला जन्म अच्छा नहीं होगा। अर्थात् है, हैं, नहीं।

तीसरे प्रश्न का उत्तर है यह बूढा आदमी । इसने पिछले जन्म में शुभ कर्म नहीं किये थे इसलिए इस जन्म में दरिद्र हुआ, किन्तु इस जन्म में गुरु द्वार पर सेवा कर रहा है इसलिए इसका आगे का जन्म अच्छा होगा। अर्थात् नहीं,

नहीं, है।

और चौथे प्रश्न का उत्तर है यह मच्छीमार। इसने पिछले जन्म में अशुभ कर्म किये इसलिये अभी मच्छीमार बना और अभी भी मछलियाँ पकड़ने का हीन कर्म कर रहा है । कोई शुभ कर्म नहीं कर रहा है इसलिये इसका आगे का जन्म अच्छा नहीं होगा। अर्थात् नहीं, नही, नहीं।

सभी लोग उस बुद्धिमति लड़की के प्रश्नों का उत्तर सुनकर बड़े खुश हुए और उसकी बहुत प्रसंशा की। राजा ने भी खुश होकर उसे बहुत इनाम दिया और मंत्री को भी ऐसी बुद्धिमान कन्या के पिता होने के लिए बधाई दी।

आप भी अपने जीवन में ऐसे काम करो कि जिससे कर्म बंधनों से मुक्त हो जाओ। कर्म, कर्म बन्धन में फँसने के लिए नहीं पर मुक्त होने के लिए करो। भगवान ने गीता में इसी को नैष्कर्मय सिद्धि कहा है।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।
स संन्यासी स योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ।।

जो पुरुष कर्मफल का आश्रय न लेकर करने योग्य कर्म करता है, वह संन्यासी तथा योगी है और केवल अग्नि का त्याग करनेवाला संन्यासी नहीं है तथा केवल क्रियाओं का त्याग करनेवाला योगी नहीं है।

(श्रीमद् भगवद गीताः 6.1)

मानव जीवन का लक्ष्य

दुर्लभः विषयत्यागो, दुर्लभः तत्वदर्शनम् ।
दुर्लभा सहजावस्था सद्गुरु करूणाविना ॥

इस संसार में विषयों का त्याग होना मुश्किल है। तत्वदर्शन दुर्लभ है और सहजावस्था दुर्लभ है, किन्तु ये दुर्लभ चीजें भी सुलभ हो सकती है सद्गुरू की करूणा कृपा होने पर।

हमारी ईश्वर प्राप्ति की तड़प और सेवा-साधना में तत्परता हो तो सद्गुरू की कृपा अपने आप खींची चली आती है। इन्द्रियों के पाँच विषय में ही सारे लोंग उलझे है। कोई बिरला ही होता है जो इन विषयों से मुक्त होकर अपने स्वरूप में आता हैं।

रामायण में भी आता है कि भगवान शंकर पार्वती जी से कहते है कि:

उमा! तिनके बड़े अभाग,
जे नर हरि तजहि विषय भजहि ।

वे लोग बड़े अभागे है जो मानव जन्म पाने के बाद भी हरि भजन न करके विषयों में ही रात दिन फँसे रहते है।

इस संसार में मुख्य पाँच विषय हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। सारे जीव इन विषयों में ही उलझे हैं और अपने जीवन का समय इसी में खपा देते है। तुलसीदासजी महाराज ने कहा है:

अली पतंग मृग मीन गज एक एक रस आँच ।
तुलसी तिनकी कौन गति जिनको व्यापे पाँच ॥

अली अर्थात् भौंरा गंध में आसक्त हो जाता है, और कमल पर बैठा ही रहता है। जब शाम होती है तब कमल बंद हो जाते

है। भौंरा उसी में रह जाता है। उसमें इतनी ताकत है कि वह लकड़ी में भी छेद कर सकता है तो कमल की पत्तियाँ छेदकर उसमें से बाहर निकलना उसके लिए कठिन कार्य नहीं है किन्तु वह सुगंध में इतना आसक्त हो जाता है कि उसी में बैठा रहता है। जब सुबह होती है तब हाथी आता है सरोवर में और कमलों को अपने पैरों तले कुचल देता है। उसमें रहा हुआ भौंरा भी मारा जाता है। इस तरह भौरा गंध में आसक्त होकर अपनी जान खो देता है।

पतंगा रूप में मोहित होकर अपनी जान गंवा देता है। वह देखता है कि दूसरे पतंगे दीये में जा-जा कर उसमें जल मरते हैं फिर भी वह रूप में इतना आसक्त हो जाता है कि खुद भी दिये में जाकर जल मरता है।

हिरण शब्द के पीछे विमोहित हो सुध-बुध खो बैठता है और शिकारी के द्वारा पकड़ा जाता है।

मछली रस में आसक्त होकर मछुआरे के द्वारा फेंके जाने वाले जाल में फँस जाती है और मारी जाती है।

हाथी स्पर्श के पीछे पागल होता है। उसकी यह कमजोरी को जानकर शिकारी वन में खड्डा खोदते हैं और उसके ऊपर घास बिछाकर उस पर एक घास की नकली हथिनी रख देते हैं। हाथी उसे देखता है और उसका स्पर्श करने को जाता है और खड्डे में गिर जाता है। फिर शिकारी आकर उसे पकड़ लेते हैं। ये सब प्राणी तो इन्द्रियों के एक-एक भोग के प्रति आसक्त होते हैं और अपनी जान खो बैठते हैं। मानव की तो पांचो इन्द्रियाँ प्रबल है। अगर उसने विवेक-वैराग्य का आश्रय न लिया और इन्द्रियों के विषयों में उलझ गया तो उसकी क्या हालत होगी उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

कोई हाल मस्त कोई माल मस्त, कोई तोते,मेना, सुए में।
कोई रिधि मस्त कोई सिधि मस्त कोई राग रगिनि दुहे में।
कोई वेद मस्त, कितेब मस्त कोई चंचल ताई हांसी में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब बंधे अविद्या फाँसी में।।

ॐ--------------ॐ--------------ॐ--------------ॐ

भगवन्नाम के जप सुषुप्त शक्तियों को जाग्रत करता है, पाप-ताप का नाश करता है, चिंता और भय को दूर भगाता है, आत्म शक्ति का विकास करता है, दीनता- हीनता से मुक्ति मिलती है। अगर साधक अपने मंत्र में चिश्वास रखकर तत्परता से जप करता है तो जो उसकी कठिन से कठिन परिस्थिति भी अनुकूल हो जाती है।

मेटत कठिन कुअंक भाल के।

भगवन्नाम के जप से दुःखद प्रारब्ध, लिखा हुआ भाग्य का कुचक्र मिट जाता है। मुसीबतें शूली में से काँटा हो जाती है। कठिन लगने वाले कार्य भी उसके लिए सरल हो जाते हैं। भगवन्न नाम के जप में वो ताकत है कि चाहे कितना भी अधम व्यक्ति हो, हीन कर्म करने वाला हो,उसका पूर्व का जीवन चाहे कितना भी निंदनीय हो पर भगवन्नाम के जप से वो पवित्र आत्मा हो जाता है। मंत्रजाप दुर्बल को भी बलवान बना देता है, आंतरिक शक्तियों को जागृत करता है। रामायण मं मंत्र जाप को भक्ति का पांचवा सोपान बताया है।

मंत्र जाप मम दृढ विश्वासा
पंचम भक्ति यह वेद प्रकाशा।

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने भगवान के नाम की महिमा बताते हुए कहा कि-

कहहूँ कह लगी नाम बड़ाई ।
राम न सके नाम गुण गाई ।।

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान ने जप को यज्ञ के रूप में बताया है।

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि ।

श्रुति भगवति कहती है कि यह आत्मा बलहीन को प्राप्त नहीं होती है।

ना अयं आत्मा बलहीनेन लभ्यः ।

दुर्बल को भगवद् प्राप्ति नहीं होती है। पाप तब होता है जब आदमी भयभीत होता है। दुर्बल आदमी जितने पाप करते हैं उतने बलवान नहीं करते हैं।

अर्जुन जैसा गांडीव धनुषधारी योद्धा जब कायरता की बात करता है युद्ध से भागने की बात करता है तब भगवान करुणा करके उसके उत्थान के लिए उसे गाली देते हैं और उसे धर्मयुद्ध के लिए उत्साहित करते हैं। भगवान अर्जुन के माध्यम से हम लोगां को समझा रहे हैं कि हमारे जीवन में वीरता होनी चाहिए, साहस होना चाहिए, शक्ति होनी चाहिए। हमारे भीतर कम से कम इतनी शक्ति तो होनी चाहिए कि दुर्बल विचारों को, हानिकारक विचारों को उखाड़कर फेंक सके और अनीति से कभी समझौता न करें।

प्रकृति ने प्रत्येक प्राणी को अपनी सुरक्षा करने के लिए शक्ति दी है। साँप, बिच्छू, मधुमक्खी, चींटी आदि को ज़हर दिया है और काटने की शक्ति दी है जिससे वे आत्म रक्षा कर सकते है। आत्म रक्षा के लिए भी शक्ति चाहिए, जिस समाज

में रहते है उसकी रक्षा के लिए भी बल होना चाहिए। कुटुंब और देश की रक्षा के लिए भी शक्ति की अनिवार्य आवश्यकता होती है। जो दुर्बल है उसको दूसरे लोग कुचल देते हैं। जिसके पास बल नहीं है वह अपने कुटुंब परिवार की सुरक्षा कैसे कर पायेगा। दुर्बल आदमी जितने पाप करता है उतना बलवान व्यक्ति नहीं करते हैं।

जो छोटी-मोटी बातों में भयभीत हो जाता है वो बड़ा कार्य नहीं कर सकता। वो न खुद संभल सकता है न दूसरों को संभाल सकता है। अपने बल का उपयोग जो दूसरे को सताने में करता है वह अधम है, जो आत्मरक्षा के लिए अपने बल का उपयोग करता है वह मध्यम है और जो परोपकार के लिए, धर्म और देश की रक्षा के लिए अपने बल का उपयोग करता है वह उत्तम इन्सान है।

स्वामी विवेकानंद कहते थे कि आज भारतीय समाज में शक्ति की बहुत आवश्यकता है। भारत के प्रत्येक देवी-देवता के हाथ में शस्त्र है। यह इसी बात को प्रतिपादित करता है कि मानव को भयभीत नहीं निर्भय होना चाहिए, कायर नहीं हिम्मतवान होना चाहिए।

जिसके पास शक्ति है, बल है वो कदम-कदम पर विजय प्राप्त करता है। शक्ति के अभाव के कारण ही विदेशी लोग भारतीयों पर शासन करके गये और भारत को गुलाम बना दिया। शक्ति के अभाव में विदेशीयों ने Divide & Rule की नीति अपनाकर भारत को वर्षों तक परतंत्रता की बेड़ियों में बांधकर रखा। उसमें भी संगठनात्मक शक्ति का अभाव ही प्रमुख कारण है। इसलिए अपने जीवन में शक्ति

लाओ। शक्ति के भी अलग-अलग प्रकार हैं। जनशक्ति, संगठनशक्ति, प्राणशक्ति, मनशक्ति के साथ आत्मिक शक्ति, भावनात्म शक्ति और उससे भी ऊपर ब्रह्मशक्ति है ये सारी शक्तियाँ हमारे जीवन में होनी चाहिए सुबह, दोपहर और सायंकाल संध्या करने से, नियमित जप, ध्यान, प्राणायाम और प्रणव के उच्चारण से शक्ति का संचार हमारे भीतर होगा। उन्नति चाहने वालों को त्रिकाल संध्या अवश्य करनी चाहिए।

जीवन में शक्ति तो होनी चाहिए किन्तु भक्ति संयुक्त शक्ति होनी चाहिए। बल तो रावण, कुंभकर्ण, कंस, शिशुपाल दंतवक्र, हिरण्यकश्यपू आदि असुरों के पास भी था लेकिन वह तामसिक बल दूसरों की और अपनी हानि करने वाला और स्वयं को दुर्गति में डाले जाने वाला है। राम, कृ ष्ण, हनुमानजी आदि का बल लोगो का हित करने के लिए था। तो वे आज भी पूजे जा रहे हैं। भगवान ने गीताजी में कहा है कि-

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।

'मैं बलवानो का आसक्ति और कामनाओं से रहित बल अर्थात् सामर्थ्य हूँ ।

(भगवद् गीताः 7 .11)

रावण, कंस इत्यादि का बल दूसरों को सताने के लिए था तो आज भी लोग उस पर फिट्कार बरसाते हैं। हर साल रावण का पुतला बनाकर जलाते हैं। रावण अभिमान का पुतला था। आपके पास शक्ति तो हो किन्तु उसका अभिमान न हो यह बड़ी ऊँची बात है। भक्ति संयुक्त शक्ति हो तो वह मुक्ति का द्वार खोल देती है। बड़े लोगों को देखकर आदमी सिकुड़ता है और अपने से छोटे को देखकर अहंकारी हो जाता है यह मन

का दोष है। आपसे ज्ञान में, अनुभव में बड़े हों ऐसे लोगों का संग करना चाहिए। प्रयत्नपूर्वक बार-बार संत दर्शन और सत्संग का आश्रय लेने से मन का यह दोष दूर होता है।

सत्संग की इतनी महिमा सुनकर एक आदमी कबीरजी के पास आया और उनसे कहने लगा कि महाराज आप सत्संग की इतनी प्रसंशा करते हो यह बात ठीक है किन्तु बार-बार सत्संग सुनने की क्या आवश्यकता है? कबीरजी ने इसका सीधा उत्तर न देते हुए एक लकड़ी का टुकड़ा लिया और हथौड़ा मारकर जमीन में गाड़ दीया। वह आदमी देखता ही रह गया। दूसरे दिन वह आदमी फिर आया और पुछा कि बार-बार सत्संग की क्या जरूरत है? तब कबीरजी ने लकड़ी के उसी टुकड़े पर हथौड़े से वार कर दिया। तीसरे दिन भी यही हाल रहा, चौथे दिन भी यही हुआ। ऐसा करते करते सात दिन बीत गये। अंत में उस व्यक्ति ने कहा कि अगर आप मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं देना चाहते हो तो साफ मना कर दें। तब कबीरजी बोले 'मैं तो तुझे रोज तेरे प्रश्नों का उत्तर देता हूँ।' उस आदमी ने कहा कि 'कृपया मैं समझ पाउ इस प्रकार आप इसका उत्तर दें।' कबीरजी ने कहा कि 'तेरा प्रश्न था कि बार-बार सत्संग सुनने की क्या आवश्यकता है? तो मैंने लकड़ी का टुकड़ा जमीन में गाड़ दीया। उस पर हररोज फटके पड़ने से जैसे लकड़ी का टुकड़ा जमीन में गहरा उतरता जाता है, वैसे ही बार-बार सत्संग सुनने से मन रूपी खूंटा भी परमात्मा में गहरा उतरता जायेगा। इसलिए बार-बार सत्संग आवश्यक है।'

एक बार अकबर के दरबार में पाँच साधु आये। सब के वेश अलग-अलग थे। अकबर बादशाह को उन सब साधुओं की

जाति जानने की इच्छा हुई, पर साधुओं से सीधे ही उनकी जाति पूछना अपराध माना जाता है। इसलिए उन्होंने बीरबल को बुलाया और उनसे युक्तिपूर्वक साधुओं की जाति का पता करने के लिए कहा। तब बीरबल ने कहा कि 'महाराज! साधुओं की जाति नहीं पूछी जाती।

जाति न पूछिये संत की, पूछ लीजिए ज्ञान ।
काम आयेगी तलवार, पड़ा रहने दो म्यान ।।

संत के शरीर की जाति पूछ कर क्या करोगे? वे जिस आत्मा-परमात्मा में विश्रांति पाये हैं उस परमात्मा का ज्ञान प्राप्त कर लेने से हमारा भला होगा। जाति पूछने से हमारा क्या भला होगा?' किन्तु अकबर की जिज्ञासा थी तो बीरबल ने कहा कि ठीक है मैं उनकी जाति मालूम कर लेता हूँ। उसने उन साधुओं के पास जाकर बड़ी विनम्रता से कहा कि 'संत महात्माओं का इस नगर में हार्दिक स्वागत है। आपकी बड़ी कृपा हुई की आपने हमको दर्शन दिये। आपके आने से राजभवन पवित्र हो गया। आये हो तो भोजन करने की कृपा करें।' साधु बीरबल की विनम्रता से खुश हो गये और भोजन के लिए संमति दे दी। भोजन की तैयारी होने लगी तब बीरबल ने कहा कि कृपा करके कुछ सत्संग हो जाये। कृपा करके सत्संग के कुछ वचन ही सुना दें। एक साखी ही सुना दें। तब पंच साधुओं ने क्रमशः बोलना शुरु किया।प्रथंम साधू ने कहा-

रामनाम लड्डु गोपाल नाम घी ।
जब भी लगें भुख तू घोल-घोल पी ।।

दूसरे साधु ने कहा-

राम नाम समशेर पकड़ ले, कृष्ण कटारी बांध लिया ।
दया धर्म को ढाल बना कर जर्म का द्वारा जीत लिय ।।

तीसरे साधु ने कहा-

साहेब मेरा बानिया, सहज करे व्यापार ।
बिन दंडी बिन पालडी तोले सब संसार ।।

चौथे साधु ने कहा-

राम झरोखे बैठकर सबका मुझरा लेत ।
जैसी जिसकी चाकरी प्रभु तैसा तिसे फल देत ।।

पाँचवे साधु ने कहा-

जाति पाति न पुछे कोई
हरि को भजे सो हरि का होई ।

बीरबल ने सब साधुओं को आदरपूर्वक भोजन कराया और विश्राम करने के लिए कहा। फिर अकबर के पास जाकर कहा 'महाराज! अब तो आपको पता चल ही गया होगा कि साधुओं की जाति कौन सी है।' अकबर ने कहा कि नहीं पता चला। तब बीरबल ने विवरण देते हुए कहा कि जो पहले साधु हैं वह ब्राह्मण हैं। ब्राह्मण को मोदक प्रिय होते हैं इसलिए उनकी साखी में भी रामनाम लड्डु--- करके लड्डु की बात आ गई। दूसरें जो साधु हैं वह क्षत्रिय है। क्षत्रिय के खून में ही युद्ध और ढाल तलवार आदि होता है तो ये साधु बने फिर भी उनको अपने स्वभाव के अनुसार ही बात अच्छी लगी। तीसरे साधु हैं वह वैश्य है, बनिया है इसलिए उनकी बातों में साहेब मेरा बानिया सहज करे व्यापार आ गया। चौथे जो साधु हैं वह क्षुद्र हैं इसलिए उन्होंने कहा कि जैसी जिसकी चाकरी प्रभु तैसा तिसे फल देत

और पाँचवे साधु वर्ण संकर है वे अपनी जाति को छुपाना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने कहा कि जाति पाति न पुछे कोई हरि को भजे सो हरि का होई ।

इस प्रकार बीरबल ने अपनी चतुराई से सारे साधुओं की जाति जान ली। अकबर भी बीरबल जैसे मंत्री को पाकर अपने को भाग्यवान मानते थे। ऐसे बीरबल जब बच्चे थे तभी से सारस्वत्य मंत्र का जप करते थे। सारस्वत्य मंत्र के जप से मूर्ख व्यक्ति भी बुद्धिमान बन सकता है।

•

मिली हुई सेवा को अपनी कुशलता व तत्परता से सुन्दर बनाकर समजरूपी परमेश्वर की सेवा में अपने तन, मन, बूद्धि व जीवन को लगाना ही गुंरू की आज्ञा है अपने मन की न करके मिली हुई सेवा को मन पसंद बना लेना ही कामना रहित व स्वार्थ रहित होने का लक्षण है। इसमें अंतः करण शुद्ध होकर परमात्म प्राप्ति हो जाती है। यही गुरुकृपा प्राप्त करके मानव जीवन को सफल बनाने का अचूक राज मार्ग है।

आश्रम द्वारा निर्मित आयुर्वेदिक औषधियाँ, स्वदेशी उपयोगी सामान एवं साहित्य की प्राप्ति के लिए संपर्क करे:

संत श्री नारायण साँई आश्रम: गुजरात: श्री श्री माँ महँगीबा महिला कल्याण केन्द्र, गांभोई, हिम्मत नगर, फोन:02772-250111 * श्री साँई-बापू धाम, पेढ़माला ग्राम, हिम्मत नगर, फोन: 9824042745 *ग्राम: नावरा नर्मदा तट, राजपीपला फोन:02640-241356*सोमनाथ रोड़, पोरबंदर * मध्य प्रदेश: कल्लीपुरा- मेध नगर, जिला-झाबुआ, फोन: 07390-284102, 284334 *बिहार: ग्राम-अहियारी, कमतौल, दरभंगा, फोन:06272-281060 * महाराष्ट्र : कुंभार पाड़ा, सिरगांव, चंदनसार रोड़, विरार-इस्ट, थाना **अन्य प्राप्ति स्थान:** * मध्य प्रदेश: मांगल्य मंदिर, रतलाम फोन: 07412-260012, 22* **महाराष्ट्र** :श्री अनिल मंगवानी, थाना वेस्ट, फोन: 022-25376565, 09892417641 *श्री सुनीलभाई चुंक, कांदिवली वेस्ट,-400067 फोन:022-56923392*श्री तिवारीजी, 86, चंद्र नगर, भांडुप, मुंबई *श्री गणेश माणेकलाल परदेशी फोन: 02473-262653 उस्मानाबाद *श्री अशोक दिवांग, नासिक फोन:0253-2620055*श्री सतीश वाधवानी, नागपुर फोन: 0712-3127109, 09422129681* गुजरात: श्रीजगदीश भाई, गोधरा फोन:02672-250302*श्रीरमेश भाई, कोसम्बा, सूरत फोन:02629-232403, 09825656397 *श्री राकेश भाई, इडर फोन:02778-252292 *श्री नयन सोनी, बारडोली फोन:09824187279 * श्री किशोरभाई, पोरबंदर फोन:8570547 *श्रीकैलाशसचंद्र अग्रवाल उड़ीसा-768004 फोन: 0663-2402467 *राजस्थान: श्री मनोज मूलचंदानी, उदयपुर फोन: 0294-2583427, 09414161427* श्री ओमभाई, अजमेर फोन: 9829127871 * बिहार: श्री दिलीपभाई राणा, रक्सोल
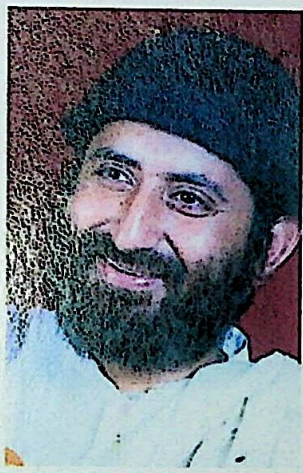
मधुमय जीवन

मुस्कान आपके चेहरे पर अठखेलियां करती रहे, मन हल्का रहे, चिन्ता के बोझ दूर रहें, जीवन आशा, उत्साह, उमंग से भरा रहे। व्यक्तित्व फुल जैसा निर्मल, निर्दोष, आकर्षक, सुगंधित बना रहे। कोयल की सी मस्ती में गाते रहें, कुकते रहें। भौरे की तरह गुनगुनाते रहें। जीवन में कलाओं को उभारते रहें।

श्री श्री नारायण साँई

"हे अमर आत्मन् !
नश्वर शरीर, नश्वर वस्तुओं, नश्वर संबंध का सदुपयोग
करते हुए शाश्वत को पाने की चाह को तीव्र बना लो।
बहुत समय बीत चुका, अब समय को संभालते हुए
सत्य को पाने की प्यास बढ़ाओ।
शाश्वत परमात्म को उपलब्ध कर। करो हिम्मत।
अवश्य सफल बनोगे।
ॐ------ॐ------ॐ
इसी जीवन में अजर अमर आत्मा का अनुभव करने में
सफल हो जाओ। समय बड़ा मूल्यवान है।
ॐ---आनंद---ॐ---शांति---ॐ"

–श्रद्धेय श्री नारायण साँई